Research Inspiration ISSN: 2455-443X
An International Multidisciplinary e-Journal
(Peer Reviewed, Open Access & Indexed)
www.researchinspiration.com
Email: researchinspiration.com@gmail.com, publish1257@gmail.com
Vol. 2, Issue-I
Dec. 2016
Impact Factor : 4.012 (IIJIF)

गीता में जीवात्मा और परमात्मा

डॉ. लता देवी,
सहायक आचार्य,
संस्कृत विभाग, ज्ञानपथ, समरहिल, शिमला-171005.

संक्षेपिका

गीता= गीयते इति गीता= जो गान किया जाये उसका नाम ''गीता'' है। श्रीमद्भगवद्गीता महाभारत ग्रन्थ का एक छोटा सा अंश है। यह महाभारत के भीष्म पर्व से लिया गया है। जिसमें श्रीकृष्ण अर्जुन को गीता में जीवात्मा का उपदेश देते हुए शरीर और जीवात्मा को दो पृथक पदार्थों के रूप में वर्णित करते हैं। जिसमें शरीर को नाशवान् और जीवात्मा को अविनाशी कहा गया है।

जीवात्मा और परमात्मा पर गीता में अत्यधिक श्लोक हैं। परन्तु इस शोध-पत्र में सारगर्भित अंश में बींस श्लोक ही लिये गये हैं। जिनका अनुवाद जीवात्मा और परमात्मा पर विशेष बल देते हुए किया गया है। बहुत सारे लेखकों ने इन श्लोकों की व्याख्या अपने स्तर पर की है। इस शोध-पत्र में व्याख्या व्यापक स्तर पर किये जाने के प्रयास किये गये हैं। जिसमें जीवात्मा की सर्वव्यापकता, नित्यता, अवधनीयता और स्थिरता का वर्णन किया गया है। यह जीवात्मा मनुष्य में विद्यामन रहते हुए इन्द्रियों द्वारा विषयों का ग्रहण करता है तथा यह परमात्मा का ही एक अंश है जो अन्ततः उसी परमात्मा में मिल जाता है।

गीता शब्द का अर्थ

गीता= गीयते इति गीता= जो गान किया जाये उसका नाम ''गीता'' है, और वह गान विना किसी शब्द विशेष के नहीं हो सकता, इसलिये वेद के कर्म, उपासना तथा ज्ञान, यह तीनों काण्ड जिस शब्द समुदायात्मक ग्रन्थविशेष से गान= वर्णन किये जाये उसका नाम ''गीता'' है, यद्यपि गीता शब्द का प्रयोग रामगीता, अर्जुनगीता, अवधूतगीता इत्यादि अनके ग्रन्थों में किया जाता है तथापि इसका मुख्य प्रयोग श्रीमद्भगवद्गीता में ही है, क्योंकि वैदिक कर्म, उपासना तथा ज्ञान, इन तीनों काण्डों का गान कराने वाली भगवद्गीता से भिन्न अन्य कोई गीता नहीं, और इस त्रिकाण्ड वेद का व्याख्यान होने से ही गीता संसारभर के सब ग्रन्थों से उत्तम मानी गई है, और बात यह है कि उक्त तीनों वैदिक काण्डों का जैसा सरल और स्पष्ट वर्णन गीता में पाया जाता है वैसा किसी अन्य ग्रन्थ में नहीं मिलता।[1]

श्रीमद्भगवद्गीता महाभारत ग्रन्थ का एक छोटा सा अंश है। महाभारत के भीष्म पर्व के पच्चीसवें अध्याय से बयालीसवें अध्याय तक, अठारह अध्याय ही गीता है।[2]

गीता का स्वरूप

जिस परिस्थिति में गीता का उपदेश दिया गया था, वह विलक्षण थी। महाभारत का प्रलयकारी संग्राम होने जा रहा था, जिसमें भाई के सामने भाई उसका खून पीने के लिए तैयार खड़ा था। ऐसी दशा में अर्जुन का विषादी होना नितान्त स्वाभाविक है,

Research Inspiration ISSN: 2455-443X
An International Multidisciplinary e-Journal
(Peer Reviewed, Open Access & Indexed)
www.researchinspiration.com
Email: researchinspiration.com@gmail.com, publish1257@gmail.com
Vol. 2, Issue-I
Dec. 2016
Impact Factor : 4.012 (IIJIF)

अर्जुन महाभारत- कालीन योद्धाओं में परम प्रसिद्ध, नितान्त वीर्यशील था। इस प्रकार सांसारिक परिस्थितियों के बीच पड़कर कर्म के विषय में संशय रखने वाले मानव का प्रतिनिधित्व हमें अर्जुन में दृष्टिगोचर होता है। गीताज्ञान के वक्ता स्वयं श्रीकृष्ण थे, जो उस युग के परम मेधावी विद्वान् तथा कर्त्तव्यपरायण पुरुष थे। अर्जुन के सामने समस्या थी- युद्ध करूँ या न करूँ?[3] इस स्थिति में अर्जुन अपने सगे-सम्बन्धियों को देखकर निष्कर्मण्यता को प्राप्त हो जाता है और कहता है-

दृष्ट्वेमं स्वजनं कृष्ण युयुत्सुं समुपस्थितम्।
सीदंति मम गात्राणि मुखं च परिशुष्यति।।28।।

वेपथुश्च शरीरे मे रोमहर्षश्च जायते।
गांडीवं स्रंसते हस्तात्त्वक्चैव परिदह्यते।।29।।

न च शक्नोम्यवस्थातुं भ्रमतीव च मे मनः।
निमित्तानि च पश्यामि विपरीतानि केशव ।।30।।

अर्थात्-हे कृष्ण युद्ध करने की इच्छा से यहां इकट्ठे हुए इन सब स्वजनों को देखकर गात्र शिथिल हो रहे हैं, मुख सुख रहा है, शरीर में कम्पन और रोमांच हो रहा है। हाथ से गाण्डीव छुटा जा रहा है, त्वचा मेरी जल रही है और मैं खड़ा रहने में असमर्थ हूँ और मेरा मन भ्रमित हो रहा है। मुझे तो केवल अंमगल के कारण दिख रहे हैं।[4]

अर्जुन की निष्कर्मण्यता को दूर करने के लिए श्री कृष्ण ने कुरूक्षेत्र की युद्ध भूमि में अर्जुन को युद्ध करने के लिए प्रेरित करते हुए गीता का उपदेश दिया जो कि अष्टादश अध्यायों तथा सात सौ (700) पद्यों में वर्णित है। इसमें कर्म ज्ञान और उपासना का विवेचन करते हुए जीवात्मा और परमात्मा का सुन्दर उपदेश दिया गया है।

जीवात्मा की निष्पत्ति

जीव उपपद आत्मन् शब्द से इसकी निष्पत्ति होती है-जिसका अर्थ है जीव की आत्मा। यास्क ने आत्मा शब्द की व्युत्पत्ति करते हुए कहा है- आत्मा 'अत्'- धातु से व्युत्पन्न होता है, जिसका अर्थ है, सतत् चलना अथवा यह 'आप' धातु से निकला है जिसका अर्थ व्याप्त होना है। आचार्य शंकर आत्मा शब्द की व्याख्या करते हुए लिंग पुराण से निम्नलिखित श्लोक उद्धृत करते हैं-

यच्चाप्नोति यदादत्ते यच्चाति विषययानिह।
यच्चास्य सन्ततो भावस्तस्मादात्मेति कीर्त्यते।।

अर्थात्- जो व्याप्त करता है, ग्रहण करता है, सम्पूर्ण विषयों का उपभोग करता है और जिसकी सदैव सत्ता बनी रहती है, उसको आत्मा कहा गया है।

अतः जीवात्मा शब्द से अभिप्राय सभी जीवों को व्याप्त करने से, सम्पूर्ण जीवों द्वारा विषयों का उपभोग करने से, तथा सभी जीवों में विद्यमान रहने से है।

Research Inspiration ISSN: 2455-443X
An International Multidisciplinary e-Journal
(Peer Reviewed, Open Access & Indexed)
www.researchinspiration.com
Email: researchinspiration.com@gmail.com, publish1257@gmail.com
Vol. 2, Issue-I
Dec. 2016
Impact Factor : 4.012 (IIJIF)

गीता में जीवात्मा शब्द का विवेचन

श्रीकृष्ण अर्जुन को गीता में जीवात्मा का उपदेश देते हुए शरीर और जीवात्मा को दो पृथक पदार्थो के रूप में वर्णित किया गया है। जिसमें शरीर को नाशवान् और जीवात्मा को अविनाशी कहा है। मनुष्य में आत्मा ही सब प्रकार के कर्मों के प्रति उत्तरदायी है, शरीर नहीं।

जीवात्मा की नित्यता

गीता में जीवात्मा को अजन्मा, नित्य, शाश्वत और शरीर के मरने पर भी इसके न मरने का उपदेश दिया गया है-

न जायते म्रियते वा कदाचिन्नायं भूत्वा भविता वा न भूयः।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे।।[5]

इसलिए यह आत्मा न कभी जन्मता है न कभी मरता है यह अजन्मा है, नित्य है और शरीर के मरने पर भी यह नहीं मरता है।

य एनं वेत्ति हन्तारं यश्चैनं मन्यते हतम्।
उभौ तौ न विजानीतो नायं हन्ति न हन्यते।।[6]

अर्थात्-जो इसको मारने और मरने वाला मानता है वे दोनों नहीं जानते। न तो यह मारता है और न यह मारा जाता है।

वेदाविनाशिनं नित्यं य एनमजमव्ययम्।
कथं स पुरुषः पार्थ कं घातयति हन्ति कम्।।[7]

जो इस जीवात्मा को अविनाशी नित्य अजन्मा और अमर पहचान जाता है, वह क्यों किसको मरवाता है और क्यों किसे मारता है?

जीवात्मा का शरीर भ्रमण

साधारण मनुष्य शरीर के मरने के बाद आत्मा का भी विनाश समझ लेते हैं, जबकि ऐसा नहीं होता, नाश तो केवल शरीर का ही होता है, आत्मा का नहीं। गीता में कहा गया है-

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णान्यन्यानि संयाति नवानि देही।।[8]

जैसे मनुष्य पुराने वस्त्रों को छोड़कर नये वस्त्र धारण कर लेता है, वैसे ही जीवात्मा पुराने शरीर को छोड़कर नये शरीर में धारण कर लेता है।

Research Inspiration ISSN: 2455-443X
An International Multidisciplinary e-Journal
(Peer Reviewed, Open Access & Indexed)
www.researchinspiration.com
Email: researchinspiration.com@gmail.com, publish1257@gmail.com
Vol. 2, Issue-I
Dec. 2016
Impact Factor : 4.012 (IIJIF)

जीवात्मा का स्वरूप

श्रीमद्भगवद्गीता में जीवात्मा को अव्यक्त, अचिन्त्य तथा अविकारी कहा गया है, जिसे अच्छी प्रकार से जान करके अर्जुन को शोक न करने का उपदेश दिया गया है-

अव्यक्तोऽयमचिन्त्योऽयमविकार्योऽयमुच्यते।
तस्मादेवं विदित्वैनं नानुशोचितुमर्हसि।।[9]

इस जीवात्मा को न शस्त्रों के द्वारा नहीं काटा जा सकता है और न अग्नि के द्वारा इसको जलाया जा सकता है, जल भी इसे गीला नहीं कर सकता है और वायु भी इसको सुखाने में असमर्थ है-

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः।।[10]

यह जीवात्मा नित्य है, सर्वत्र विद्यमान है, अचल है और सनातन है। यह अच्छेद्य, अदाह्य, अक्लेद्य और अशोष्य है।

अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयमक्लेद्योऽशोष्य एव च।
नित्यः सर्वगतः स्थाणुरचलोऽयं सनातनः।।[11]

इस जीवात्मतत्त्व का भिन्न-भिन्न मनुष्यों द्वारा दर्शन तथा श्रवण किया जाता है-

आश्चर्यवत्पश्यति कश्चिदेनमाश्चर्यवद्वदति तथैव चान्यः।
आश्चर्यवच्चैनमन्यः शृणोति श्रुत्वाप्येनं वेद न चैव कश्चित्।।[12]

कुछ लोग जीवात्मा को आश्चर्य चकित होकर देखते हैं तो कुछ लोग इसे आश्चर्य से कहते हैं, कुछ लोग इसका आश्चर्य से श्रवण करते हैं तो कुछ लोग सब कुछ जानते हुए भी इसे अनदेखा करते हैं।

जीवात्मा की सर्वव्यापकता

श्रीमद्भगवद्गीता में जीवात्मा की सर्वव्यापकता का वर्णन करते हुए भगवान श्रीकृष्ण ने सभी मनुष्यों के शरीरों में इसकी व्यापकता का वर्णन किया है-

देही नित्यमवध्योऽयं देहे सर्वस्य भारत।
तस्मात्सर्वाणि भूतानि न त्वं शोचितुमर्हसि।।[13]

जीवात्मा शरीर में नित्य है और इसका वध नहीं किया जा सकता है। हे अर्जुन यह सभी प्राणियों में विद्यमान है। इसलिए तुम्हें शोक नहीं करना चाहिए। जीवात्मा सम्पूर्ण कार्यों को करने वाला तथा सुख-दुःखों को भोगने वाला कहा गया है-

Research Inspiration ISSN: 2455-443X
An International Multidisciplinary e-Journal
(Peer Reviewed, Open Access & Indexed)
www.researchinspiration.com
Email: researchinspiration.com@gmail.com, publish1257@gmail.com
Vol. 2, Issue-I
Dec. 2016
Impact Factor : 4.012 (IIJIF)

कार्यकरणकर्तृत्वे हेतुः प्रकृतिरूच्यते।
पुरुषः सुखदुःखानां भोक्तृत्वे हेतुरुच्यते।।[14]

परमात्मा

परमात्मा शब्द दो शब्दों से मिलकर बना है- 'परम' तथा 'आत्मा'। परम का अर्थ सर्वोच्च एवं आत्मा से अभिप्राय है चेतना, जिसे प्राण शक्ति भी कहा जाता है। आधुनिक हिन्दी में ये शब्द ईश्वर का ही बोधक है।

परमात्मा का स्वरूप

परमात्मा का एक स्वरूप उसका गुणवाचक है। वह हमने स्थान-स्थान पर ऊपर बताया है। संक्षेप में वह है सच्चिदानन्द, सर्वव्यापक, भर्त्ता, परमेश्वर, प्रभु विष्णु इत्यादि।

परन्तु गीता में स्थूल स्वरूप का भी वर्णन किया है। स्थूल स्वरूप इस प्रकार कि जब परमात्मा इस सृष्टि की रचना, संहार और पालन करता है तो जगत् की प्रत्येक वस्तु में परमात्मा का स्वरूप दिखाई देता है।

जैसे मनुष्य का कार्य और व्यवहार देखकर कहा जाता है कि अमुक मनुष्य ने यह किया है तो मनुष्य का शरीर ही प्रत्यक्ष दिखाई देने वाला है और कार्य करता प्रतीत होता है, परन्तु वास्तव में वह मनुष्य नहीं होता। शरीर तो जड़ है, कार्य और व्यवहार करने वाला आत्मा होता है।

गीता में इस शरीर को लक्ष्य रखकर कई स्थानों पर लिखा है कि यह सब कुछ परमात्मा का ही स्वरूप है। वास्तव में यह परमात्मा का तनु है, जैसे-आत्मा का शरीर होता है, इस बात को स्पष्ट करने के लिये भगवान् श्रीकृष्ण ने गीता में इस प्रकार कहा है-

हे अर्जुन, परमात्मा के परम रहस्य और प्रभाव को सुन।[240] यह मैं तुम्हारे प्रति प्रेम होने के कारण तुम्हारे हित के लिए ही कहूँगा अर्थात्-जब यह कहा जा रहा है कि सर्वभूत और सम्पूर्ण जगत् परमात्मा से ही उत्पन्न, पोषण और संहार किये जाते हैं तो इससे क्या अभिप्राय है? इस रहस्य को बताते ही परमात्मा के इस जगत् में स्थित होने की विधि को बता दिया है।

देवता और महर्षिगण परमात्मा के इस रहस्य को नहीं जानते। इसमें कारण यह है कि देवताओं में दिव्यता और महर्षियों के ऋषयत्व का आदि कारण भी तो परमात्मा ही है।241[15]

श्रीमद्भगवद्गीता में परमात्मा का उल्लेख अजन्मा, अविनाशी तथा सभी प्राणियों के ईश्वर के रूप में किया गया है-

अजोऽपि सन्नव्ययात्मा भूतानामीश्वरोऽपि सन्।
प्रकृतिं स्वामधिष्ठाय सम्भवाम्यात्ममायया।।[16]

Research Inspiration ISSN: 2455-443X
An International Multidisciplinary e-Journal
(Peer Reviewed, Open Access & Indexed)
www.researchinspiration.com
Email: researchinspiration.com@gmail.com, publish1257@gmail.com
Vol. 2, Issue-I
Dec. 2016
Impact Factor : 4.012 (IIJIF)

इसमें परमात्मा ने स्वयं कहा है कि मैं अजन्मा और अविनाशी स्वरूप होते हुए भी तथा समस्त प्राणियों का ईश्वर होते हुए भी अपनी प्रकृति को अधीन करके अपनी योग माया से प्रकट होता हूँ।

इस संसार में जब-जब धर्म की हानि और अधर्म की वृद्धि होती है, तब वह परमात्मा धर्म की स्थापना करने के लिए, सज्जनों की रक्षा करने के लिए और पाप कर्म करने वालों का विनाश करने के लिए स्वयं धरती पर अवतरित होते हैं-

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।।

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे।।[17]

परमात्मा की सर्वव्यापकता

श्रीमद्भगवद्गीता में परमात्मा की सर्वव्यापकता का वर्णन करते हुए कहा गया है कि वह सम्पूर्ण दृश्यमान् चराचर जगत् में विद्यमान होते हुए सभी प्राणियों के नज़दीक भी है और उनके बाहर और भीतर सर्वत्र विद्यमान है-

बहिरन्तश्च भूतानामचरं चरमेव च।
सूक्ष्मत्वात्तदविज्ञेयं दूरस्थं चान्तिके च तत्।।[18]

जैसे सूर्य की किरणों में स्थित हुआ जल सूक्ष्म होने से साधारण मनुष्यों के जानने में नहीं आता है, वैसे ही सर्वव्यापी परमात्मा भी सूक्ष्म होने से साधारण मनुष्यों के जानने में नहीं आता है। वह परमात्मा सर्वत्र परिपूर्ण और सबका आत्मा होने से अत्यन्त समीप है।

अविभक्तं च भूतेषु विभक्तमिव च स्थितम्।
भूतभर्तृ च तज्ज्ञेयं ग्रसिष्णु प्रभविष्णु च।।[19]

वह परमात्मा विभागरहित होते हुए भी एक रूप से आकाश के सदृश व्यापक है तथा वह सभी प्राणियों में विभक्त सा प्रतीत होता है जैसे- महाकाश विभागरहित स्थित हुआ भी घड़ों में पृथक-पृथक प्रतीत होता है, वैसे ही परमात्मा सब प्राणियों में एक रूप से स्थित हुआ भी पृथक-पृथक प्रतीत होता है। गीता में तत्त्व ज्ञान के द्वारा परमात्मा को जानने का उल्लेख किया गया है-

ज्योतिषामपि तज्ज्योतिस्तमसः परमुच्यते।
ज्ञानं ज्ञेयं ज्ञानगम्यं हृदि सर्वस्य विष्ठितम्।।[20]

वह परमात्मा ज्योतियों का भी ज्योति है एवं माया से अत्यन्त परे है, वह बोधस्वरुप जानने योग्य एवं तत्त्व ज्ञान से प्राप्त करने योग्य है और वह सबके हृदय में विशेष रूप में स्थित है।

Research Inspiration
An International Multidisciplinary e-Journal
(Peer Reviewed, Open Access & Indexed)
www.researchinspiration.com
Email: researchinspiration.com@gmail.com, publish1257@gmail.com
ISSN: 2455-443X
Vol. 2, Issue-I
Dec. 2016
Impact Factor : 4.012 (IIJIF)

दिवि सूर्यसहस्रस्य भवेद्युगपदुत्थिता।
यदि भाः सदृशी सा स्याद्भासस्तस्य महात्मनः।।[21]

अर्थात्-आकाश में हजारों सूर्यों के उदित होने से जितना प्रकाश उत्पन्न होता है, उस उत्पन्न हुए प्रकाश से भी अधिक प्रकाश स्वरूप वह परमात्मा है।

निष्कर्ष

अन्त में यह कहा जा सकता है कि श्रीमद्भगवद्गीता में जीवात्मा तथा परमात्मा का बहुत ही सुन्दर विवेचन किया गया है, जिसमें जीवात्मा की सर्वव्यापकता, नित्यता, अवधनीयता और स्थिरता का वर्णन किया गया है। यह जीवात्मा प्रत्येक मनुष्यों में विद्यमान रहते हुए इन्द्रियों द्वारा विषयों का ग्रहण करता है तथा यह परमात्मा का ही एक अंश है जो अन्त में उसी परमात्मा में मिल जाता है। गीता में परमात्मा को परम ऐश्वर्य युक्त, सूक्ष्म, सर्वव्यापक तथा परम तेजस्वी रूप में वर्णित किया गया है। जो सभी प्राणियों का सृष्टि कर्ता, पालन करता तथा संहार कर्ता है जो प्राणी सभी कर्मों को उस परमात्मा के निमित्त करते हैं, वह उसी परमात्मा में लीन होकर जन्म-जन्मान्तरों के पापों से मुक्त हो जाते हैं-

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः।।[22]

इस प्रकार गीता में जीवात्मा तथा परमात्मा का सुन्दर विवेचन किया गया है। गीता एक ऐसा विश्व प्रसिद्ध ग्रन्थ है, जिसे सभी मनुष्यों को जानना चाहिए तथा नित्यप्रति इसका अध्ययन भी करना चाहिए, क्योंकि इसके अध्ययन से मनुष्य कर्त्तव्यों-अकर्त्तव्यों से अच्छी तरह परिचित हो जाता है तथा इसके नित्यप्रति पढ़ने से मनुष्य के पूर्व जन्म के सभी पाप नष्ट हो जाते हैं-

गीताध्ययनशीलस्य प्राणायाम परस्य च।
नैव सन्ति हि पापानि पूर्व जन्म कृतानि च।।

सन्दर्भ

1. गीतायोगप्रदीपार्य्यभाष्य, भूमिका, पृष्ठ-3।
2. श्रीमद्भगवद्गीता- एक अध्ययन, प्रथम अध्याय, पृष्ठ संख्या-49।
3. भारतीय दर्शन, तृतीय परिच्छेद, गीता दर्शन, पृष्ठ संख्या-55।
4. श्रीमद्भगवद्गीता, प्रथम अध्याय, 28-30।
5. श्रीमद्भगवद्गीता, 2 अध्याय, श्लोक-20।
6. वही, 2 अध्याय, श्लोक 19।
7. वही, 2 अध्याय, श्लोक 21।
8. श्रीमद्भगवद्गीता, 2 अध्याय, श्लोक-22।
9. वही, 2 अध्याय, श्लोक-25।
10. वही, 2 अध्याय, श्लोक- 23।

Research Inspiration
An International Multidisciplinary e-Journal
(Peer Reviewed, Open Access & Indexed)
www.researchinspiration.com
Email: researchinspiration.com@gmail.com, publish1257@gmail.com
ISSN: 2455-443X
Vol. 2, Issue-I
Dec. 2016
Impact Factor : 4.012 (IIJIF)

11. श्रीमद्भगवद्गीता, 2 अध्याय, श्लोक -24
12. वही, 2 अध्याय, श्लोक-29।
13. वही, 2 अध्याय, श्लोक- 30।
14. श्रीमद्भगवद्गीता, 13 अध्याय, श्लोक-21।
15. श्रीमदभगवद्गीता- एक अध्ययन, सप्तम अध्याय, पृष्ठ संख्या-275।
16. श्रीमद्भगवद्गीता, 4 अध्याय, श्लोक-6।
17. वही, 4 अध्याय, श्लोक-7,8।
18. श्रीमद्भगवद्गीता, 13 अध्याय, श्लोक-16।
19. वही, 13 अध्याय, श्लोक-17।
20. श्रीमद्भगवद्गीता, 13 अध्याय, श्लोक-18।
21. वही, 11 अध्याय, श्लोक-12।
22. श्रीमद्भगवद्गीता, 18 अध्याय, श्लोक-66।